इकाई 13 भारत में क्षेत्रीय विषमताएँ

संरचना

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 क्षेत्रीय विषमता : अवधारणा एवं सिद्धांत

13.3 क्षेत्रीय विषमता और घरेलू उत्पाद

13.4 कृषिक विकास और क्षेत्रीय विषमता

13.5 औद्योगिक विकास और क्षेत्रीय विषमता

13.6 आधारभूत संरचनात्मक विकास और क्षेत्रीय विषमता

- 13.6.1 आधारभूत सामाजिक संरचनागत सुविधाएँ
- 13.6.2 आधारभूत भौतिक संरचनागत सुविधाएँ

13.7 क्षेत्रीय विषमताओं के कारण

13.8 क्षेत्रीय विषमता निवारण के उपाय

- 13.8.1 मुख्य त्रुटियाँ/सीमाएँ

13.9 संतुलित क्षेत्रीय विकास के लिए सुझाव

13.10 अभिसरण प्रमेय (Convergence theorem)

13.11 सारांश

13.12 अभ्यास प्रश्न

13.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.14 शब्दावली

13.15 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इस योग्य होंगे कि :

- क्षेत्रीय विषमता का अर्थ बता सकें;
- क्षेत्रीय विषमता विषयक सैद्धांतिक रूपरेखा पर चर्चा कर सकें;
- संवृद्धि दर, प्रति व्यक्ति जी.डी.पी. और जी.डी.पी. के क्षेत्रीय योगदान आदि के माध्यम से क्षेत्रीय विषमता का विश्लेषण कर सकें;
- कृषि में क्षेत्रीय विषमता की समीक्षा कर सकें;
- आधारभूत संरचनात्मक विकास में क्षेत्रीय विषमता की पहचान कर सकें; और
- मानवीय विकास में क्षेत्रीय विषमता का मूल्यांकन कर सकें।

13.1 प्रस्तावना

भारत में अंतर्राज्यीय/ क्षेत्रीय विषमता नियोजन और नीति निर्माताओं के लिए बड़ी चुनौती बनी हुई है। अनेक विकास कार्यक्रमों को लागू करने के बाद भी ये विषमता बनी हुई है। स्वतंत्रता पूर्व की अवधि में उपलब्ध सुविधाओं के अनुसार ऊर्जस्वी क्षेत्रों और आंतरिक क्षेत्रों के बीच बहुत बड़ी खाई थी। इसकी भी आर्थिक और मानवीय विकास की महामानता में झलक दिखाई पड़ी है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान भी क्षेत्रीय विषमताएँ बनी रहीं हैं। भारत में इस विषय पर अधिक सैद्धांतिक कार्य नहीं हो पाया है, किंतु विकास के प्रश्नों पर कई आंकड़ों पर आधारित अध्ययन किए गए हैं। प्रो. माथुर (1987) ने क्षेत्रीय विषमता की व्याख्या की है। आय और उपभोग में क्षेत्रीय विषमता के अधिकांश अध्ययनों में विषमता वृद्धि की प्रवृत्ति की ओर संकेत हुए हैं। दास और बरुआ (1996) का मत है कि भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि की क्षेत्रीय विषमता की वृद्धि के रूप में लागत चुकानी पड़ रही है। द्रीज और सेन (1995) का मत है कि क्षेत्रीय विकास में भारी अंतरों के कारण बहुत अधिक आंतरिक विविधताएँ आ रही हैं। दत्त और रेवेल्लियन का विचार है कि ग्रामीण जीवन में दीर्घकालिक प्रगति में भारतीय राज्यों में काफी अंतर है।

इसी प्रकार राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट, 2001 ने भी 1981-2001 की अवधि में विभिन्न भारतीय राज्यों में मानव विकास में बहुत बड़े अंतर स्पष्ट किए हैं। उस रिपोर्ट ने बताया है कि बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उड़ीसा का मानव विकास सूचक केरल के सूचक से आधे से भी कम रहा है। इसी पृष्ठभूमि में हम इस इकाई में भारत में क्षेत्रीय विषमताओं पर विचार करेंगे। इस विषमता पर हम समष्टि आर्थिक समकों, संरचनात्मक विकास, कृषिक, औद्योगिक और मानवीय विकास के अंतरों का प्रयोग कर, चर्चा करेंगे।

13.2 क्षेत्रीय विषमता : अवधारणा एवं सिद्धांत

समाजशास्त्रीय शोध में विषमता शब्द का बहुत बार प्रयोग होता है। इसके अंग्रेज़ी समतुल्य शब्द disparity की व्युत्पत्ति लेटिन के शब्द disparitas से मानी जाती है जिसका अर्थ है 'विभाजित' । अतः disparity का शब्दिक अर्थ असमानता या किसी विषय या घटना में अनुपातहीनता होना है। द अमेरिकन हेरिटेज शब्दकोष ने disparity अर्थात् विषमता को असमानता या अंतर होने (आयु, पद, मज़दूरी आदि) के रूप में परिभाषित किया है। अतः क्षेत्रीय विषमता का अर्थ होगा अंतर्क्षेत्रीय या अंतःक्षेत्रीय (भौगोलिक इकाइयों, गतिविधि समूहों) इकाइयों से जुड़े आर्थिक एवं गैर-आर्थिक सूचकों में अंतर पाया जाना। केरीन बोरोअर (2007) ने इस प्रकार से परिभाषा की है : उपयुक्त समझे गए किसी संदर्भित स्वरूप/धारणा से किन्हीं स्थानिक (क्षेत्रीय, सीमानुसार) आधार पर नियत मानक से विच्युति को क्षेत्रीय विषमता कहते हैं। अलोइस कत्शेरोअर आदि के अनुसार ''क्षेत्रीय विषमता किन्हीं भू-क्षेत्रीय आबंटनों के अनुसार उस भू-क्षेत्रीय संरचना की कम से कम दो इकाइयों के बीच विभिन्न लक्षणों, प्रक्रियाओं, घटनाक्रमों आदि में विच्युति या असमानता होगी।

क्षेत्रीय विषमता उस अवस्था को इंगित करती है जब विभिन्न क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति आय, उपभोग खाद्य उपलब्धता, कृषिक एवं औद्योगिक विकास, संरचना सुविधाओं के विकास समान प्रायः नहीं हों। यह विषमता की समस्या समूचे विश्व में पायी जाती

है। हाँ, सभी देशों में इसकी गहनता समान नहीं होगी। सभी देशों को अपनी विकास यात्रा में इस समस्या से जूझना पड़ता है।

क्षेत्रीय विषमता के सैद्धांतिक विश्लेषण में भी बड़े तीखे अंतर दिखाई देते हैं। किंतु संवृद्धि के साथ क्षेत्रीय विषमताओं के उल्टे U–आकार जैसे संबंध पर सामान्य सहमति बनी है। साइमोन कुजनेट्स (1963), हर्षमैन (1958) मीरा (1965) जैसे क्षेत्रीय अध्ययन विदों ने सामाजिक-राजनीतिक विकास और आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में क्षेत्रीय विषमताएँ उभरना सामान्य माना है। इनके सिद्धांतों के अनुसार विकास के प्रारंभिक चरणों में शहरों के वर्चस्व, सामाजिक-स्थानिक और वैयक्तिक स्तर की विषमताएँ उभरती हैं, किंतु विकास की अगली सीढ़ियों पर चढ़ते हुए समय के साथ-साथ इनमें कमी आने लगती है। मिर्डल और हर्षमैन ने पश्च-प्रवाह बनाम प्रसार प्रभाव और ध्रुवीकरण बनाम निःसृति प्रभाव के विचार प्रतिपादित किए हैं। मिर्डल के विचार में गुणक और त्वरक की प्रक्रिया चहेते क्षेत्रों में संचीय वृद्धिमान प्रतिफलों की सृष्टि कर देती है। फिर तो विकास में अंतरों का उभरना उन क्षेत्रों के पक्ष में संचीय प्रसार की श्रृंखला को जन्म दे देती है। मिर्डल ने इसे अन्य क्षेत्रों की दृष्टि से पश्च-प्रवाह का नाम दिया है और इसी के कारण विकास में अंतर बने रहते हैं (अर्थात् अन्य क्षेत्र पिछड़ते जाते हैं)। अतः पश्च-प्रवाह के प्रभाव (जिसे हर्षमैन ने अंतर्क्षेत्रीय विकास के ध्रुवीकरण का नाम दिया था) का निवारण करने के लिए उपयुक्त नीतियां बनाई जानी चाहिएं। इसी दृष्टि से उसने निःसृति प्रभाव को सबल बनाने के लिए नीति रूपरेखा भी सुझाई है। ये प्रभाव पिछड़े क्षेत्रों के विकास का पक्ष लेता है। मिर्डल ने इसे 'प्रसार प्रभाव कहा था। इसमें पिछड़े क्षेत्रों के उत्पादों की मांग में वृद्धि और वहाँ प्रौद्योगिकी एवं ज्ञान का प्रसार सम्मिलित रहते हैं। मिर्डल (1957) ने तर्क दिया था कि पश्च-प्रवाह प्रभाव प्रसार प्रभाव की अपेक्षा क्षीण होता है और इस (पश्च-प्रवाह) के निवारण के लिए सरकार को प्रभावी क्षेत्रीय विकास युक्तियाँ बनानी होंगी। लॉड़ (1990) भी इसी मत के समर्थक हैं। कुल मिलाकर बात यह है कि यदि समस्या के निवारण के लिए उपयुक्त प्रति उपाय नहीं किए जाते तो विभिन्न क्षेत्रों के बीच अंतर लगातार अधिक विस्तृत होते रहते हैं। एग्लेमैन और मोरिस (1975) ने 1957-68 की अवधि के 74 अल्पविकसित देशों के आंकड़ों का विश्लेषण कर यह पाया कि आर्थिक विकास के स्तर और गरीबतम 60 प्रतिशत जनसंख्या के आय में अंश के बीच असंगमत U-आकार जैसा संबंध होता है। एलिजोंड़ी और क्रुग्मैन (1992) का अध्ययन बता रहा है कि अर्थव्यवस्था जब प्रतिबंधकारी व्यापार नीतियां त्याग कर मुक्त व्यापार की ओर अग्रसर होती है तो क्षेत्रीय विषमताएँ कम होती हैं। कुछ भी हो, क्षेत्रीय विषमता को समझ पाने में इन सिद्धांतों की उपादेयता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। अंततः किसी देश ने अपने नीतिगत उद्देश्य की वहां क्षेत्रीय विषमता के निवारण में उपुर्यक्त सिद्धांतों की व्यावहारिक उपादेयता के निर्धारक होंगे (राजशेखर एवं अन्य–2004)।

संवृद्धि और विषमता विषयक अधिकांश नई रचनाएँ उन प्रतिमानों पर केंद्रित हैं जो विभिन्न देशों के बीच अंतर की व्याख्या करते हैं। इनमें ये सैद्धांतिक और अनुभवजन्य अध्ययन प्रमुख हैं : बैर्रो, रॉबर्ट जे (1990, 1991, 1999), बैररो, रॉबर्ट जे. एवं जोंगव्हाली (1994), बैररो, रॉबर्ट जे. एन ग्रेगरी मैनकिकव एवं जेवियर साला-ए मार्टिन (1991, 1992क, 1992ख, 1992ग, 1997, 2007) बॉमोल (1986), कैशिन (1995), कैशिक एवं सहाय (1996), डेलोंग (1988), डोरिक एवं न्युयेन (1989), ईस्टर्लिन (1960क, 1960ख), क्वाह (1993, 1995, 1996क, 1996ख) आदि। ये सभी अध्ययन राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर अभिनति और अमानिनति की प्रक्रिया से संबंधित है।

13.3 क्षेत्रीय विषमता और घरेलू उत्पाद

पिछले 6 दशकों में भारतीय अर्थव्यवस्था की औसत संवृद्धि दर 5.5 प्रतिशत रही है। वैसे इस संवृद्धि दर में उतार-चढ़ाव भी आए हैं। सकल घरेलू उपाय की संरचना में भी इस अवधि में बहुत से फेरबदल हुए हैं।

कुछ उपक्षेत्रों में वार्षिक वृद्धि दरों में भारी अंतर दिखाई दे रहे हैं। कृषि एवं आनुषांगिक कार्य उप-क्षेत्र तो बहुत बड़े उतार-चढ़ावों से ग्रस्त रहा है। खनन एवं उत्पादन भी इसी जैसा रहा है। सामान्यतः विनिर्माण की प्रवृत्तियाँ अधिक स्थायित्वपूर्ण रही हैं। इन सबसे अलग, सेवा क्षेत्र में निरंतर वृद्धि ही हुई है।

राष्ट्रीय आय के आबंटन की दृष्टि से प्रति व्यक्ति निवल राज्य घरेलू उत्पाद के आंकड़ों का विश्लेषण अधिक उपयोगी रहेगा। हम इस कार्य के लिए उपयुक्त आँकड़े तालिका 13.1 में संकलित कर रहे हैं। ये आँकड़े भारत वर्ष के स्तर पर विभिन्न अवधियों में अंतर और देशों एवं प्रांतों के बीच अंतर तथा विभिन्न प्रांतों के बीच अंतर स्पष्ट दर्शा रहे हैं।

तालिका 13.1 : प्रति व्यक्ति निवल राज्य घरेलू उत्पाद और इसकी संवृद्धि दरें

	(आधार : 1993-94)			(आधार :1999-2000)			(आधार : 2004-05)		
राज्य/संघ शासित राज्य	1993-94	1999-00	वृद्धि	1999-00	2004-05	वृद्धि	2004-05	2009-10	वृद्धि
आंध्र प्रदेश	7416	9445	4.1	15427	19963	5.3	25321	36345	7.5
अरूणाचल प्रदेश	8733	8890	0.3	13990	19339	6.7	27271	39679	7.8
असम	5715	5785	0.2	12282	13946	2.6	16782	20279	3.9
बिहार	3037	3282	1.3	5786	6772	3.2	7759	11558	8.3
झारखंड	5897	7238	3.5	11549	12869	2.2	18512	22780	4.2
गुजरात	9796	13298	5.2	18864	23346	4.4	32021	49030	8.9
हरियाणा	11079	13308	3.1	23222	30690	5.7	37842	55214	7.8
हिमाचल प्रदेश	7870	11051	5.8	20806	26244	4.8	32564	40690	4.6
जम्मू एंड कश्मीर	6543	7384	2.0	13816	15414	2.2	21314	26739	4.6
कर्नाटक	7838	10912	5.7	17502	19840	2.5	26745	37464	7.0
केरल	7983	10430	4.6	19461	25122	5.2	31871	46511	7.9
मध्य प्रदेश	6584	8248	3.8	12384	12032	–0.6	15442	19736	5.0
छत्तीसगढ़	6539	6692	0.4	11629	14070	3.9	18559	25835	6.8
महाराष्ट्र	12183	15257	3.8	23011	26603	2.9	35915	57458	9.9
उड़ीसा	4896	5742	2.7	10622	13311	4.6	17380	24098	6.8
पंजाब	12710	14809	2.6	25631	27905	1.7	32948	43539	5.7
राजस्थान	6182	8555	5.6	13619	14908	1.8	18565	23669	5.0
तमिलनाडु	8955	12167	5.2	19432	22975	3.4	30105	46823	9.2
उत्तर प्रदेश	5066	5675	1.9	9749	10421	1.3	12840	16182	4.7
उत्तराखंड	6896	7256	0.9	13516	19524	7.6	24740	41126	10.7
पश्चिम बंगाल	6756	9320	5.5	15888	19367	4.0	22654	30504	6.1
दिल्ली	18166	24003	4.8	38913	45157	3.0	61560	89037	7.7
पूरा भारत	**7690**	**10071**	**4.6**	**15881**	**19331**	**4.0**	**24143**	**33731**	**6.9**

स्रोत : आर.बी.आई।

प्रति व्यक्ति निवल राज्य घरेलू उत्पाद 2004-05 से 2009-10 की अवधि में 6.9 प्रतिशत की वार्षिक दर से बढ़कर रु.24143 से रु.33731 पर पहुँच गया। दूसरी ओर 1993-2000 की अवधि में इस NSDP की वृद्धि दर केवल 4.6 प्रतिशत थी। उच्चतम NSDP दिल्ली में (रु.89000) और दूसरे क्रम पर महाराष्ट्र में (रु.57478) आंकी गई है। निम्न संवृद्धि वाले प्रांत बिहार (रु.11558) और उत्तर प्रदेश (रु.16000) रहे हैं। प्रति व्यक्ति आय के आधार पर राज्यों के क्रमांक विभिन्न राज्यों के बीच विषमता दर्शाते हैं। वर्ष 1993-94, 1999-2000 और 2009-10 में बिहार का क्रमांक न्यूनतम और तीनों ही वर्षों में दिल्ली का अधिकतम रहा है।

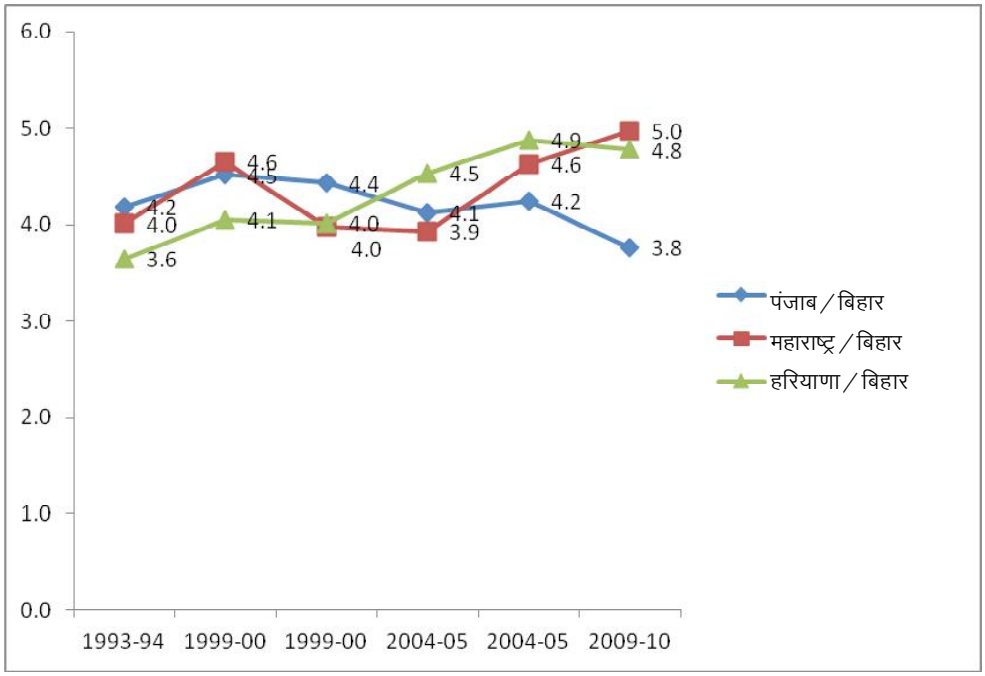

चित्र 13.1 : बिहार के प्रति व्यक्ति निवल राज्य उत्पाद का पंजाब, महाराष्ट्र और हरियाणा से अनुपात

चित्र 13.1 अमीर और गरीब प्रांतों के NSDP के प्रति व्यक्ति स्तरों के बीच अंतर को अनुपात रूप में दिखा रहा है। यहाँ हमने बिहार को एक गरीब राज्य का उदाहरण माना है और महाराष्ट्र, पंजाब एवं हरियाणा को विकसित प्रांतों के प्रतिनिधि माना है। इन तीनों के NSDP का बिहार के NSDP के साथ अनुपात इस चित्र में दर्शाया गया है। इस अनुपात की अधिकता दोनों राज्यों के बीच अधिक अंतर की परिचायक है। चित्र में महाराष्ट्र-बिहार अनुपात 5 का अर्थ है कि बिहार का प्रति व्यक्ति निवल घरेलू उत्पाद महाराष्ट्र स्तर का मात्र 20 प्रतिशत है। इसी प्रकार, अन्य राज्यों/ बिहार अनुपात की व्याख्या होगी।

13.4 कृषिक विकास और क्षेत्रीय विषमता

हमने पहले भी चर्चा की है कि जी.डी.पी. में कृषि क्षेत्र का योगदान कम हो रहा है। यह 1950-51 के 51.9 प्रतिशत से गिरकर 2009-10 में मात्र 14.5 प्रतिशत रह गया था। 2003-05 की अवधि में कृषि का जी.डी.पी. में योगदान 21.3 प्रतिशत जबकि 2001 में इस क्षेत्र में देश की कार्यशक्ति का 58 प्रतिशत कार्य कर रहा था। राज्य स्तर के विश्लेषण से पता चल रहा है कि पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में कृषि का जी.डी.पी. में योगदान तो उच्च है किंतु कृषि में श्रमशक्ति की भागीदारी अपेक्षाकृत कम है।

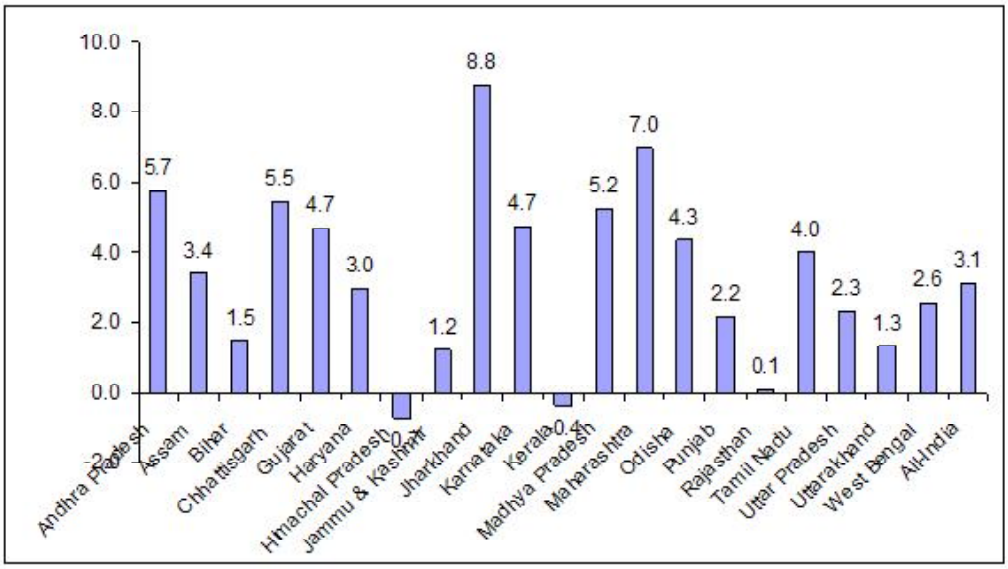

चित्र 13.2 : कृषि से घरेलू उत्पाद की संवृद्धि दर, 2004-2010

तालिका 13.2 : भारतीय राज्यों में कृषि का SGDP और सकल कार्यशक्ति में अनुपात

	GDP में कृषि का अंशदान (%)		कृषि में कार्यशक्ति का अंशदान	
	1981-83	2003-05	1981	2001
बिहार	43.6	30.7	79.0	77.6
उत्तर प्रदेश	44.4	30.4	74.5	69.2
उड़ीसा	44.8	23.6	74.7	68.1
राजस्थान	43.7	24.9	68.9	67.8
पश्चिम बंगाल	27.3	21.6	55.0	47.7
मध्य प्रदेश	36.4	24.4	76.2	75.5
कर्नाटक	40.0	17.3	65.0	58.1
केरल	31.2	12.7	41.3	23.7
तमिलनाडु	23.8	12.9	60.9	52.1
हिमाचल प्रदेश	31.1	17.8	70.8	69.7
आंध्र प्रदेश	38.4	23.5	69.5	65.2
गुजरात	36.3	16.2	60.1	52.7
महाराष्ट्र	22.3	10.5	61.8	56.5
हरियाणा	47.9	27.8	60.8	52.6
पंजाब	48.6	36.9	58.0	40.4
भारत (15 राज्य)	**37.2**	**21.3**	**66.5**	**58.2**

स्रोतः CSO के आंकड़ों पर आधारित।

तालिका 13.2 में प्रत्येक बड़े राज्य में कृषि का GSDP में योगदान दिखाया गया है। यह 1980-81 के 35.7 प्रतिशत से घटकर 2008–09 में 15.5 प्रतिशत रह गया। विभिन्न राज्यों में भी यही चित्र उभर कर आया है। वर्ष 1980-81 में अखिल भारतीय स्तर पर कृषि का जी डी पी में अंशदान 37.2 प्रतिशत था। किंतु 1990 में राज्य स्तर पर अधिकतम योगदान वाले राज्य क्रमशः उड़ीसा (54.59 प्रतिशत) और बिहार (52.45 प्रतिशत) रहे। दूसरी ओर, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल जैसे विकसित

प्रांतों में कृषि का अंशदान कम हुआ है। तमिलनाडु में यह अंशदान उड़ीसा की अपेक्षा आधे से भी कम है। तो पश्चिम बंगाल में बिहार के दो-तिहाई से कुछ अधिक। वर्ष 2008-09 में पूरे देश में कृषि का जी.डी.पी. में योगदान घटकर 15.6 प्रतिशत रह गया। अर्थात् 20.2 प्रतिशत बिंदुओं की गिरावट आयी। जिन राज्यों के निम्न कृषि योगदान अंकित हुआ उनमें हैं : तमिलनाडु (10 प्रतिशत-गिरावट 14.25 प्रतिशत बिंदु) और महाराष्ट्र (13.35 प्रतिशत– गिरावट 12.18 प्रतिशत बिंदु)। बिहार में तो 26.71 प्रतिशत बिंदुओं की भारी गिरावट दर्ज की गई है।

चित्र 13.2 में कृषि से घरेलू उत्पाद की संवृद्धि दरें (2004-10) अंकित की गई हैं राष्ट्रीय स्तर पर यह 3.1 प्रतिशत रही है। उच्चतम संवृद्धि दर झारखंड और फिर महाराष्ट्र में पायी गई। इनके विपरीत केरल और हिमालच प्रदेश में तो ये दर ऋणात्मक रही है।

कार्यशक्ति का क्षेत्रवार विभाजन कृषि के श्रम अंश में कुछ गिरावट दिखा रहा है। किंतु यह गिरावट बहुत धीमी रहा है। आशा के अनुरूप 1978-79 से 2004-05 के बीच कृषि का श्रम अंश 84.4 प्रतिशत से कम हुआ है। किंतु यह 74.85 प्रतिशत तक ही गिरा है। इस अवधि में श्रम की कृषि पर निर्भरता में 9.55 प्रतिशत बिंदुओं की गिरावट आयी है। जबकि कृषि क्षेत्र के योगदान में 19.1 प्रतिशत बिंदुओं की गिरावट पायी गई। तालिका 13.3 में राज्य स्तर पर कृषि क्षेत्र का सकल रोज़गार 1983 के 81.4 प्रतिशत से कम लेकर 2009-10 में 67.9 प्रतिशत रह गया। वर्ष 2009-10 में ही बड़े राज्यों में छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश में कृषि क्षेत्र में अधिकतम रोज़गार योगदान रहा जबकि केरल और पश्चिम बंगाल में सकल रोज़गार में कृषि का योगदान क्रमशः 35.7 प्रतिशत ओर 56.3 प्रतिशत रहा।

तालिका 13.3 : सकल ग्रामीण रोज़गार में राज्यवार कृषिक क्षेत्र के अंश

राज्य	1983	1993-94	2004-05	2009-10	परिवर्तन बिंदु (1983-2009)
आंध्र प्रदेश	80.0	77.3	71.7	68.7	11.3
असम	79.0	78.7	74.2	70.5	8.5
बिहार	84.4	83.1	77.9	66.9	17.5
छत्तीसगढ़	93.0	90.6	86.1	84.9	8.1
गुजरात	84.8	79.3	77.2	78.3	6.5
हरियाणा	76.9	71.4	64.0	59.8	17.1
हिमाचल प्रदेश	87.1	77.2	69.4	62.9	24.2
जम्मू एंड कश्मीर	79.7	72.0	63.8	59.7	20.0
झारखंड	81.4	76.1	69.9	54.8	26.6
कर्नाटक	84.3	81.7	80.9	75.7	8.6
केरल	62.8	57.7	42.0	35.7	27.1
मध्य प्रदेश	89.0	86.2	82.5	82.4	6.6
महाराष्ट्र	85.7	79.7	79.9	79.4	6.3
उड़ीसा	79.1	78.1	69.0	67.6	11.5
पंजाब	82.2	77.3	66.8	61.8	20.4
राजस्थान	86.5	80.8	72.8	63.3	23.2
तमिलनाडु	74.4	68.7	65.3	63.7	10.7
उत्तर प्रदेश	82.1	79.3	72.6	66.9	15.2
उत्तराखंड	81.9	65.1	78.2	69.5	12.4
पश्चिम बंगाल	73.6	73.1	62.7	56.3	17.3
सारा भारत	**81.4**	**78.3**	**72.6**	**67.9**	**13.5**

स्रोत : अन्जनी कुमार आदि, 2011 से उद्धृत NSSO unit level data (38th, 50th, 61st and 66th rounds)

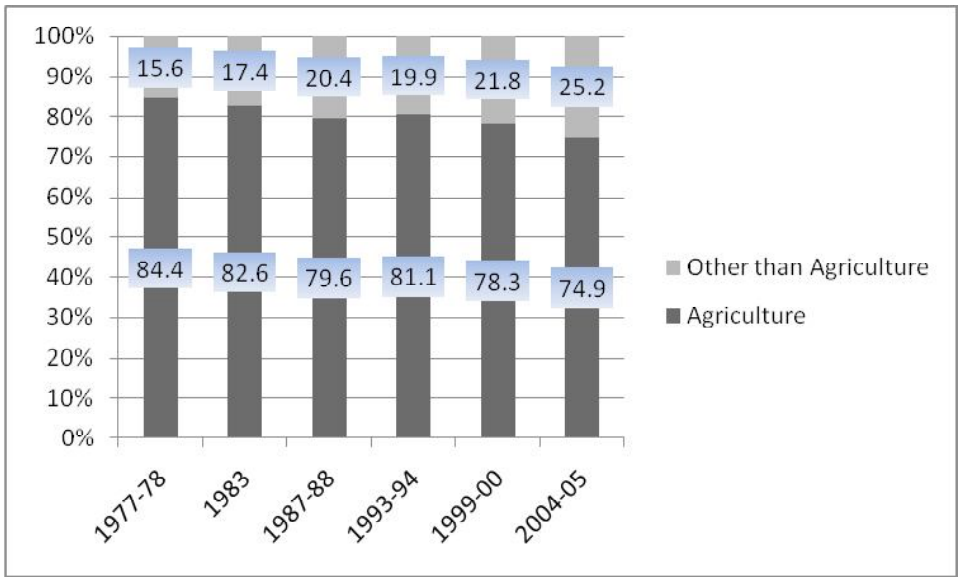

चित्र 13.3 : कर्मियों का प्रतिशत वितरण

स्रोत : रिपोर्ट NSS 531 पर आधारित। रोज़गार/बेरोज़गार की भारत में स्थिति।

कृषि में श्रम की उत्पादिता में वृद्धि बहुत धीमी रही है। एक नवीन अध्ययन के अनुसार 1965-68 से 2003-06 के बीच श्रम उत्पादिता की त्रिवार्षिक संवृद्धि दर मात्र 1.07 प्रतिशत रही। यही कारण है कि कृषि और गैर-कृषि GDP प्रति श्रमिक में हमें इतना विशाल अंतर दिखाई देता है। उत्पादिता की इस धीमी वृद्धि के मुख्य कारण ये रहे हैं : (i) हरित क्रांति का प्रसार केवल कुछ राज्यों तक सीमित रहा; और (ii) कृषि से गैर-कृषि कार्यों की ओर श्रम का रूझान अभी प्रारंभ हुआ ही है। आशा के अनुरूप श्रमिक उत्पादित वृद्धि की उच्चतर दर (2003-06), पंजाब (रु.34225) और दूसरे क्रम पर हरियाणा (रु.15447) में रही। कृषि में निम्नतम उत्पादिता बिहार में (रु.1749), हिमाचल (रु.2584), मध्यप्रदेश (रु.5196) और महाराष्ट्र (रु.5781) अंकित की गई। एक और महत्त्वपूर्ण बात है : 2003-06 में पंजाब में कृषि श्रमिक उत्पादिता बिहार की अपेक्षा 20 गुनी थी। वर्ष 1962-65 से लेकर 2003-06 के बीच कृषि श्रमिकों की उत्पादिता वृद्धि दर मात्र 0.3 प्रतिशत रही है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि विभिन्न राज्यों में कृषि के निष्पादन में भारी अंतर रहे हैं। यह राज्यों के बीच आय विषमता की आंशिक एक महत्त्वपूर्ण, किंतु व्याख्या है।

बोध प्रश्न 1

1) क्षेत्रीय विषमता की अवधारणा बताइए।

.....

.....

.....

2) पश्च-प्रवाह बनाम प्रसार प्रभाव क्या है?

.....

.....

.....

3) भारतीय संदर्भ में अनुभवजन्य शोध करने वाले अध्येयताओं के नाम बताइए।

.....

.....

.....

4) न्यूनतम संवृद्धि दर किस राज्य में रही है?

.....

.....

.....

13.5 औद्योगिक विकास और क्षेत्रीय विषमता

अन्य विकासशील देशों की तरह भारत में भी कुछ सीमित से हिस्सों में औद्योगिक संतुलन दिखाई पड़ता है। भारत सरकार ने संतुलित क्षेत्रीय विकास के लिए अनेक उपाय अपनाए हैं। नीतियों में अत्यंत जटिल नियमन के साथ औद्योगीकरण झलकता है। उसमें भी अनेक उद्योग केवल सार्वजनिक उपक्रमों के लिए आरक्षित हैं। अब अर्थव्यवस्था के उदारीकरण के साथ औद्योगिक विकास में सरकारी भूमिका के न्यूनतम करने की बात उठी है। यह तर्क भी सुनाई दे रहा है कि किन्हीं क्षेत्रों में (आर्थिक रूप से विकसित प्रांतों में) औद्योगिक संकुलन तो वहां विद्यमान सामाजिक और आर्थिक संरचनात्मक सुविधाओं द्वारा सृजित तुलनात्मक हितलाभों का परिणाम है। अन्य राष्ट्र स्तरीय अध्ययन भी इस तर्क का समर्थन कर रहे हैं।

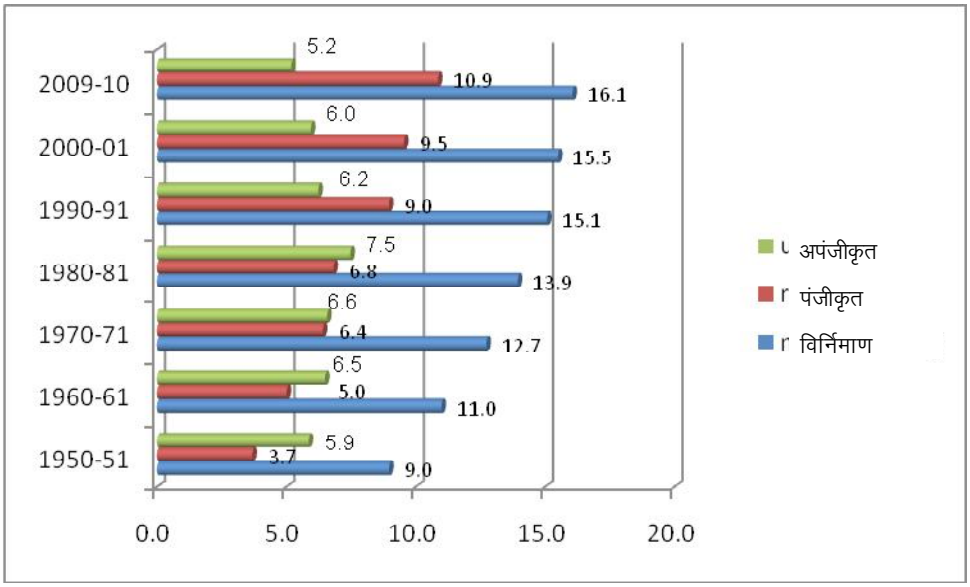

चित्र 13.4 : भारत में सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में विनिर्माण (पंजीकृत एवं अपंजीकृत) क्षेत्र का अंश

स्रोत : www.mospi.gov.in

सरकार द्वारा संतुलित क्षेत्रीय विकास के नाम पर बनाई गई सभी नीतियों के बाद भी देश में संतुलित औद्योगिक विकास की समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है। भारतीय राज्यों में विनिर्माण के GSDP में अंशों में बहुत अंतर हैं। पूरे देश में तो विनिर्माण का अंश 2004-05 के 15.46 से 2009-10 में 16.1 प्रतिशत हुआ है। बड़े प्रांतों में 2004-05 में यह अंश बिहार में 5.6 प्रतिशत से झारखंड में 33.7 प्रतिशत रहा। गुजरात और महाराष्ट्र जैसे प्रमुख औद्योगिक प्रांतों में भी विनिर्माण का GSDP में योगदान उच्चतर रहा है। वर्ष 2009-10 में झारखंड में यह अंश घटकर 19.2 प्रतिशत पर आ गया है। बिहार में योगदान निम्नतम और गुजरात में उच्चतम रहा। देश के राज्यों में विनिर्माण क्षेत्र को दो वर्गों में बांट कर औद्योगिक गतिविधियों का आकलन करते हैं। ये वर्ग हैं पंजीकृत उद्योग और अपंजीकृत उद्योग। अखिल भारतीय स्तर पर पंजीकृत-अपंजीकृत अनुपात 67.7% :32.3% पाया गया है। पंजीकृत के अंश में 64.5% से 67.7% तक की मामूली वृद्धि दर्ज हुई है। राज्यों की पंजीकृत उद्योग अंश के अनुसार तुलना भी यही दिखाती है कि प्रायः सभी प्रांतों में इनका योगदान अपेक्षाकृत अधिक था। बिहार में 39.4 प्रतिशत, जम्मू एंड कश्मीर में 37.4 प्रतिशत और केरल में 44.1 प्रतिशत दर्ज किए गए पंजीकृत क्षेत्र के सकल औद्योगिक उत्पादन अंश अपंजीकृत की अपेक्षा कम रहे। यही नहीं, उड़ीसा और छत्तीसगढ़ में भी पंजीकृत विनिर्माण के योगदान अपंजीकृत की अपेक्षा अधिक थे।

2004-05 से 2009-10 के बीच भारत में अपंजीकृत क्षेत्र का योगदान 35.5 प्रतिशत से कम होकर 32.3 प्रतिशत रह गया। तीन नवगठित राज्यों, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड और झारखंड के योगदान अन्य राज्यों से उच्चतर हैं। उड़ीसा में भी अपंजीकृत क्षेत्र का योगदान अपेक्षाकृत कम है।

परिशिष्ट–1 में विनिर्माण और औद्योगिक क्षेत्र की संवृद्धि दर की समग्र रूप में व्याख्या (2004 से 2010 की अवधि के लिए) की गई है। इस अवधि में उद्योगों की संवृद्धि दर 10.3 प्रतिशत रही। उच्चतम संवृद्धि दर बिहार में (15.1 प्रतिशत) और उत्तराखंड (15.9 प्रतिशत) रही तो असम (0.5 प्रतिशत) तथा झारखंड में (–1.1 प्रतिशत) न्यूनतम वृद्धि दर्ज की गई।

सभी राज्यों में सेवा क्षेत्र के GSDP में स्थिर मदों (1993-94) पर योगदान भी इसी प्रकार के निष्कर्ष प्रदान करते हैं (तालिका 13.4)।

तालिका 13.4 : सकल राज्य घरेलू उत्पाद GSDP में सेवा क्षेत्र का प्रतिशत अंश (1993-94 की कीमतों पर)

	मुख्य राज्य	1980-81	1990-91	2000-01	2008-09
1	आंध्र प्रदेश	39.26	41.71	46.54	51.25
2	बिहार	28.02	31.95	39.76(43.39)	45.41(51.28)
3	गुजरात	33.22	37.34	40.18	44.38
4	हरियाणा	25.39	29.81	40.18	46.43
5	कर्नाटक	31.59	39.17	46.13	54.53
6	केरल	40.92	50.35	56.09	60.73
7	मध्य प्रदेश	27.99	33.36	39.82(40.55)	38.22(39.71)
8	महाराष्ट्र	39.94	43.686	53.36	57.20

9	उड़ीसा	27.16	34.76	43.38	45.07
10	पंजाब	36.18	33.48	36.92	41.27
11	राजस्थान	33.94	35.12	41.15	41.90
12	तमिलनाडु	36.73	39.98	47.93	57.10
13	उत्तर प्रदेश	33.94	37.90	40.30(40.34)	42.00(42.44)
14	पश्चिम बंगाल	40.38	43.34	49.35	53.50
	भारत	**36.60**	**40.60**	**46.90**	**59.30**

स्रोत : पपोला आदि, 2011 से उद्धृत।

तालिका 13.4 में 14 बड़े राज्यों में सकल राज्य घरेलू उत्पाद (GSDP) में सेवा क्षेत्र के योगदान दिखाए गए हैं। ये योगदान 1980-81 के 36.60 प्रतिशत से बढ़कर 2008-09 में 57.30 प्रतिशत हो गया था। दूसरे शब्दों में, उक्त अवधि में 20 प्रतिशत बिंदुओं की शानदार वृद्धि हुई है। वर्ष 1980-81 में पश्चिम बंगाल में सेवा क्षेत्र का योगदान उच्चतम (40.38 प्रतिशत) था और हरियाणा में न्यूनतम था। किंतु 2008-09 में केरल और महाराष्ट्र में सेवा क्षेत्र का योगदान उच्च रहा। उसी वर्ष के पंजाब और राजस्थान में यह अंश न्यूनतम था। यदि प्रतिशत बिंदु परिवर्तन पर विचार करें तो कर्नाटक और हरियाणा में उच्चतम सुधार (क्रमशः 22.94 और 21.04) दर्ज किया गया है। दूसरी ओर पंजाब व राजस्थान में सेवा क्षेत्र के अंशदान में बहुत न्यून (5.04 और 7.96 बिंदुओं का) सुधार देखा गया है। कुल मिलाकर बिहार, गुजरात, हरियाणा, केरल, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तमिलनाडु और उत्तराखंड में संवृद्धि दर राष्ट्रव्यापी औसत से अधिक रही है। दूसरी ओर, आन्ध्र, असम, हिमाचल, जम्मू-कश्मीर, झारखंड, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बांगल की संवृद्धि दर देश की संवृद्धि दर से कम रही है। इस अविध में न्यूनतम दर जम्मू-कश्मीर (7.3 प्रतिशत) तथा उच्चतम (15.9 प्रतिशत) उत्तराखंड में रही।

13.6 आधारभूत संरचनात्मक विकास और क्षेत्रीय विषमता

अनेक विद्वानों ने आर्थिक विकास, व्यापार, रोज़गार बढ़ाने और क्षेत्रीय विषमताएँ घटाने में संरचनात्मक सुविधाओं के महत्त्व को स्वीकार किया है। इकबाल और सुलेमान, 2010; सिद्दीकी और हसन, 2010; सरकार, 2009; हंगरागी, 2008; नरेन्द्र और अनेजा, 2008; कुन्डु आदि, 1999। आपने इकाई 4 में जाना है कि संरचनात्मक (विशेषकर भौतिक) सुविधाओं की सुलभता तो धारणीय आर्थिक और सामाजिक विकास की पूर्व-शर्त होती है। इन सुविधाओं की अपर्याप्तता या अनुपस्थिति संवृद्धि के लिए एक गंभीर खतरा बन जाती है। आइए, भारत के विभिन्न राज्यों में संरचना सुविधा सुलभता की वर्तमान अवस्था पर विचार करें।

13.6.1 आधारभूत सामाजिक संरचनागत सुविधाएँ

सामाजिक संरचनागत सुविधाओं से मुख्य रूप से हमारा अभिप्राय शिक्षा स्वास्थ्य और स्वच्छता से रहता है। भारत में शिक्षा सुविधाओं के मापक के रूप में राज्यों में बुनियादी (प्राथमिक और उच्च प्राथमिक) स्कूलों की संख्या का प्रयोग होता है। राज्यों में तुलना के लिए इस संख्या को प्रति 10000 जनसंख्या के अनुसार आकलित किया जाता है।

शिक्षा

सभी मानते हैं कि साक्षरता का किसी भी क्षेत्र के विकास स्तर पर सकारात्मक प्रभाव रहता है। यह व्यक्तियों को समाज में सुलभ विभिन्न नए अवसरों में भागीदारी के योग्य बनाती है। जनगणना आंकड़ों के अनुसार 1951 में साक्षरता दर मात्र 18 प्रतिशत थी जो 2011 में 74.04 प्रतिशत तक जा पहुँची। किंतु विभिन्न राज्यों में आंतरिक और उनके बीच साक्षरता में बहुत विषमताएँ हैं। इसी प्रकार भारत में स्त्री और पुरुष की साक्षरता दरों में भी बहुत अधिक अंतर पाए गए हैं।

विभिन्न प्रांतों में साक्षरता स्तरों में अंतर भी क्षेत्रीय विषमता की झलक दे रहे हैं। इसके लिए हम 2011 की पुरुष साक्षरता दर से महिला साक्षरता का अंतर ज्ञात करते हैं। चित्र 13.5 में राज्यवार साक्षरता लिंगानुसार अंतराल दिखाया गया है। इस चित्र में एक प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से उभर कर आयी है। दिल्ली, केरल और पंजाब जैसे विकसित राज्यों में यह अंतराल कम है जबकि कम विकसित राज्यों, राजस्थान, झारखंड, छत्तीसगढ़ आदि में साक्षरता में लिंग आधारित अंतराल अधिक विस्तृत है। बड़े राज्यों के अधिकतम लिंग साक्षरण अंतराल (28 प्रतिशत) राजस्थान में और न्यूनतम (4 प्रतिशत) केरल में पाया गया है।

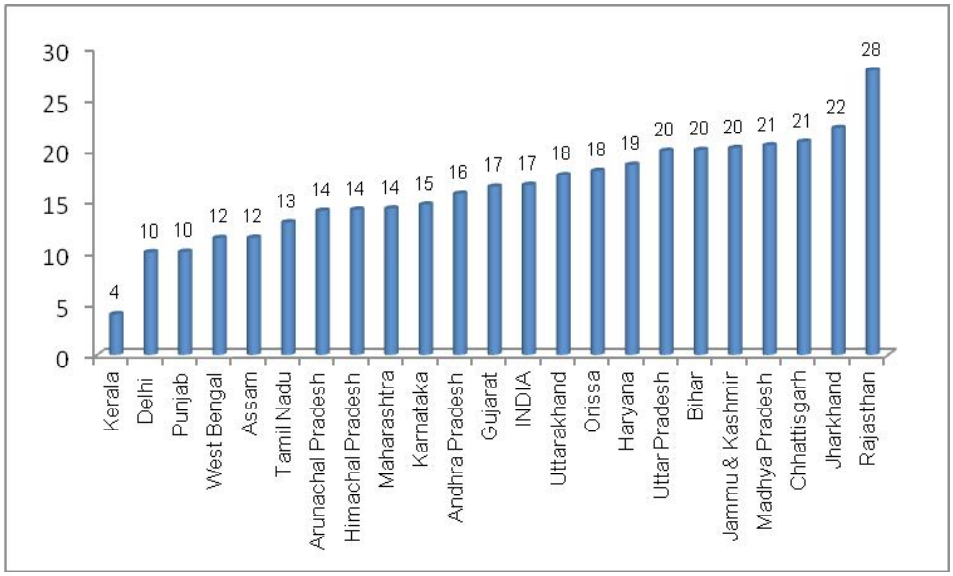

चित्र 13.6 : पुरुष-स्त्री साक्षरता दर अंतराल (प्रतिशत बिंदु अंतर) 2011

स्रोत : भारत की जनगणना, 2011

किसी भी क्षेत्र की साक्षरता दर के निर्धारण में वहां उपलब्ध शिक्षा की सुविधाओं की बड़ी भूमिका रहती है। स्कूलों की उपलब्धता, अच्छे भवन, पर्याप्त संख्या में शिक्षक, शौचालय और पेयजल की व्यवस्था आदि किसी क्षेत्र में शैक्षिक गुणवत्ता के प्रमुख आपूर्ति पक्षीय कारक होते हैं। चित्र 13.7 में प्रति एक लाख जनसंख्या के आधार पर 2009-10 में प्राथमिक एवं माध्यमिक स्कूलों की अंतिम संख्या दिखाई गई है। देश भर में यह संख्या 127 है। अरुणाचल (423), हिमालच (283) और जम्मू-कश्मीर (253) उच्च निष्पादक राज्य रहे हैं तो बिहार, केरल और दिल्ली में यह संख्या निम्न रही।

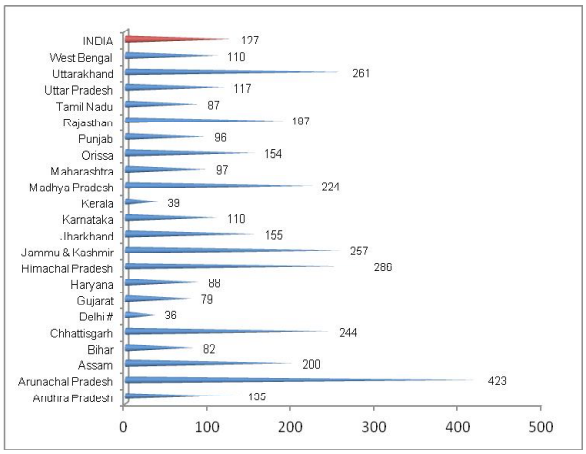

चित्र 13.7 : प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्कूल प्रति एक लाख जनसंख्या 2009-10 (अनंतिम)

नोट : ये सरकारी और निजी दोनों प्रकार के प्राथमिक, उच्च प्राथमिक स्कूलों की संख्या है।

शिक्षा की क्षेत्रीय विषमताओं का मापन कुछ अन्य सूचकों द्वारा भी हो सकता हैः एक कमरे वाले स्कूलों का प्रतिशत, एक शिक्षक वाले स्कूलों का प्रतिशत। भारत में 6 प्रतिशत प्राथमिक स्कूलों में केवल एक शिक्षण कक्षा है। आंध्र और अरुणाचल प्रदेश में ऐसे स्कूलों का अनुपात उच्च है तो दिल्ली, केरल, हरियाणा और छत्तीसगढ़ में कम है। भारत में 9.3 प्रतिशत प्राथमिक स्कूल केवल एक शिक्षक के सहारे चल रहे हैं। ऐसे स्कूलों का अनुपात अरुणाचल और राजस्थान में उच्च रहा। केरल और गुजरात में इन स्कूलों का अनुपात निम्न था (2009-10)।

स्कूलों में कुछ आधारभूत सुविधाएँ होना भी शिक्षा के विकास को प्रभावित करता है। ये सुविधाएं हैं : शौचालय सुविधा, पेयजल, बालिकाओं के लिए शौचालय, स्कूल के भवन की अवस्था आदि। देश में केवल 45 प्रतिशत स्कूलों में शौचालय हैं। पश्चिम बंगाल और उड़ीसा में सांझे शौचालय वाले स्कूलों का अनुपात उच्चतम है। दूसरी ओर, झारखंड, छत्तीसगढ़ और अरुणाचल में सांझे शौचालय वाले स्कूलों का अनुपात निम्न है।

शिक्षार्थी-शिक्षक अनुपात (PTR) शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण सूचक है। उच्च PTR शिक्षा के निम्न गुणस्तर का मापक माना जाता है। भारत में 3.5 प्रतिशत स्कूलों में PTR 100 से अधिक है। बिहार (14.8 प्रतिशत), उत्तर प्रदेश (8.9) जैसे पिछड़े हुए राज्यों में PTR>100 वाले स्कूलों के अनुपात उच्च हैं। स्कूल के भवन की दशा भी स्कूली संरचना सुविधाओं का एक महत्त्वपूर्ण सूचक है। भारत में 73.5 प्रतिशत बुनियादी स्कूल के भवनों में चल रहे हैं। राजस्थान और उत्तराखंड में ऐसे स्कूलों का अनुपात उच्चतर है। अरुणाचल, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा में पक्के भवन वाले स्कूलों का अनुपात निम्न रहा। लगभग 11 प्रतिशत स्कूलों के भवन तो हैं ही नहीं। छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश, बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल में भवनहीन स्कूलों का अनुपात उच्च पाया गया।

हमारे उपर्युक्त विवरण से दो बातें स्पष्ट हो रही हैं : (i) वर्तमान सामाजिक संरचना सुविधा ढांचा काफी कमजोर है; और (ii) राज्यों के बीच काफी विषमता भी विद्यमान है।

13.6.2 आधारभूत भौतिक संरचनात्मक सुविधाएँ

इनमें परिवहन, संचार और विद्युत ऊर्जा की उपलब्धता शामिल है। हमने इकाई 4 में भी देखा है कि भारत में प्रत्येक कसौटी के आधार पर भौतिक सुविधाएँ अपर्याप्त ही हैं। न केवल ये संरचना अपर्याप्त और कमजोर हैं, बल्कि सभी राज्यों में ये समान रूप से सुलभ भी नहीं हैं। यहां तक कि एक ही राज्य के सभी जनपदों में इतनी सुलभता के स्तरों में बड़े अंतर हैं।

बिजली की प्रति व्यक्ति खपत को विकास का एक बड़ा सूचक माना जाता है। भारत में इसका स्तर 776.71 KWH था जो कनाडा के 17053, चीन के 2471 और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका से 13647KWH से काफी कम है। विश्व भर में भी औसत बिजली की खपत 2783 KWH है। भारत के विभिन्न राज्यों में बिजली की खपत के आंकड़ों में बड़े अंतर दिखाई देते हैं। दिल्ली, गुज़रात, पंजाब जैसे विकसित प्रदेशों में ये खपत उच्चतम है तो बिहार की बिजली की खपत देशव्यापी औसत का सातवां अंश और पंजाब की औसत का पंद्रहवां अंश मात्र है।

परिवारस्तरीय बिजली प्रयोग की जानकारी के अनुसार देश में 55 प्रतिशत परिवारों को बिजली सुलभ है। ग्रामीण क्षेत्रों में ये अनुपात 43.5 और शहरी क्षेत्रों में 83.5 पतिशत है। बिहार (5.13 प्रतिशत), झारखंड (9.99 प्रतिशत), उत्तर प्रदेश (19 प्रतिशत) वे राज्य हैं जहां ग्रामीण क्षेत्र में बसे परिवारों को बिजली की सुलभता निम्न है। दूसरी ओर हिमाल (94.48 प्रतिशत मध्य प्रदेश (92.76 प्रतिशत) में अधिकतम परिवारों को बिजली सुलभ है। भारत की जनगणना, 2011।

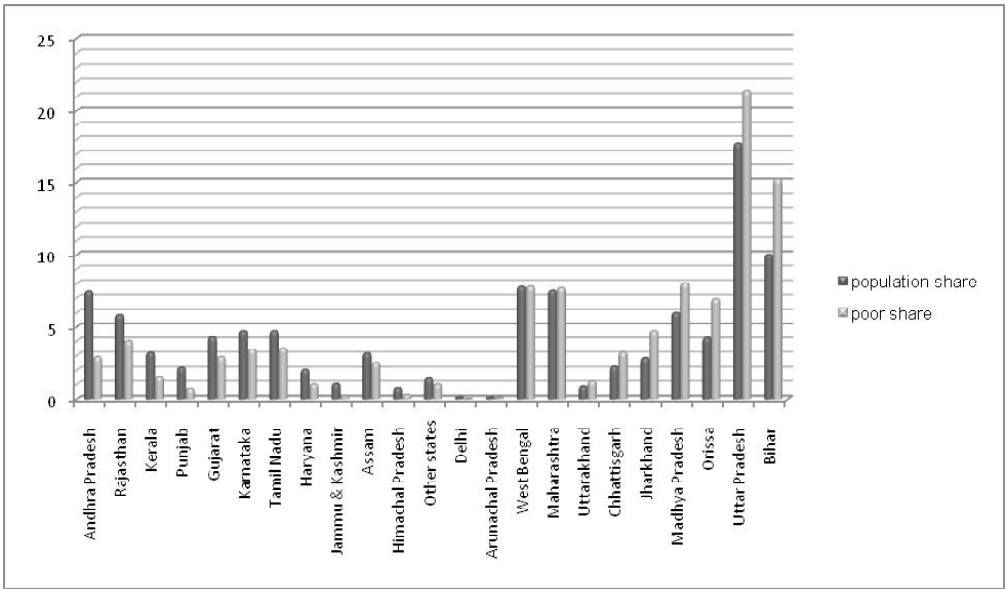

चित्र 13.8 : राज्यों में जनसंख्या अंश और राज्यवार गरीबों की जनसंख्या के राष्ट्रीय गरीब जनसंख्या में अंश।

नोट : जनसंख्या के आंकड़े जनगणना, 2001 और गरीबी अनुपात NSSO के 2004-05 आधार पर।

यह चित्र देश की कुल जनसंख्या में विभिन्न राज्यों के अंश और देश के गरीबों की कुल जनसंख्या में विभिन्न राज्यों की गरीब जनसंख्या के अंश दिखा रहा है। यह बात एकदम स्पष्ट हो जाती है कि पिछड़े हुए राज्यों के गरीबों का अनुपात उनके सकल जनसंख्या अंश से कहीं ज्यादा है। बिहार और उत्तर प्रदेश में देश की जनसंख्या

के क्रमशः 10.01 प्रतिशत और 17.75 प्रतिशत अंश बसे हैं किंतु गरीबों में से 15.2 प्रतिशत और 21.4 प्रतिशत भी इन्हीं राज्यों में हैं। इसके विपरीत आंध्र प्रदेश में समस्त जनसंख्या का 7.5 प्रतिशत बसा है किंतु देश भर के गरीबों मे ंसे केवल 2.9 प्रतिशत आंध्र प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं।

यदि मानव विकास सूचक HDI के आधार पर बात करें तो पहले तीन दौरों में केरल ने अपने प्रथम स्थान को बनाए रखा है। उसके HDI क्रमांक 0.500, 0.591 और 0.631 रहे हैं। दूसरी ओर, बिहार भी अपने निम्नतम स्थान से हिल नहीं पाया है। उसके HDI क्रमांक इन्हीं तीन अवधियों में क्रमशः 0.237, 0.308 और 0.367 रहे हैं। इन अवधियों में राजस्थान ने कुछ प्रगति दिखाई है। पहले सर्वेक्षण दौर में इसका क्रमांक 12, (1981), दूसरे में 11(1991) तथा तीसरे में 9(2001)। दूसरी ओर असम की स्थिति में ह्रास हुआ है। यह 1981 के 10 से 2001 में 15 राज्यों में 14वें स्थान पर पहुँच गया। तीनों अध्ययनों में चार राज्य अपने स्थान पर स्थापित रहे हैं : बिहार–15, केरल–1, पंजाब–2 और पश्चिम बंगाल–8।

तालिका 12.5 : राज्यों के HDI मान और क्रमांक 1981-2001

राज्य	1981		1991		2001	
	HDI	श्रेणी	HDI	श्रेणी	HDI	श्रेणी
आंध्र प्रदेश	0.298	9	0.377	9	0.416	10
असम	0.272	10	0.348	10	0.386	14
बिहार	0.237	15	0.308	15	0.367	15
गुजरात	0.360	4	0.431	6	0.479	6
हरियाणा	0.360	4	0.443	5	0.509	5
कर्नाटक	0.346	6	0.412	7	0.478	7
केरल	0.500	1	0.591	1	0.638	1
मध्य प्रदेश	0.245	14	0.328	13	0.394	12
महाराष्ट्र	0.363	3	0.452	4	0.523	4
उड़ीसा	0.267	11	0.345	12	0.404	11
पंजाब	0.411	2	0.475	2	0.537	2
राजस्थान	0.256	12	0.347	11	0.424	9
तमिलनाडु	0.343	7	0.466	3	0.531	3
उत्तर प्रदेश	0.255	13	0.314	14	0.388	13
पश्चिम बंगाल	0.305	8	0.404	8	0.472	8

स्रोत : योजना आयोग (2002) राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट, 2001.

13.7 क्षेत्रीय विषमताओं के कारण

अधिकांश विकासशील देशों की भांति भारत में भी क्षेत्रीय विषमताओं का प्रारंभ उपनिवेशी शासन काल में ही हुआ था। उस युग में समुद्र तट के दूर के क्षेत्र तटवर्ती प्रांतों से पिछड़ने लगे थे। वैसे अन्य कई कारक भी किसी क्षेत्र के विकास के स्तर को प्रभावित कर सकते हैं और उन सभी को उपनिवेशी 'धरोहर' भी नहीं माना जा सकता। उन महत्त्वपूर्ण कारकों को हम संक्षेप में, इस प्रकार रख सकते हैं :

1) प्रति व्यक्ति आय की विषमताओं की एक व्याख्या कोलिन क्लार्क की आर्थिक क्षेत्रक संकल्पना द्वारा संभव है। क्लार्क का मत था कि उन क्षेत्रों में, जहां कार्यशील

जनसंख्या का अधिक बड़ा विनिर्माण और तृतीयक क्षेत्रकों में काम करता हो, प्रति व्यक्ति आय का स्तर भी उच्च होता है। उन राज्यों में प्रति व्यक्ति आय अधिक पायी गई है। जहाँ जनसंख्या का बड़ा अंश तृतीयक कार्यों में संलग्न है।

2) औद्योगिक इकाइयों की स्थानीयता पर प्रारंभिक रेलमार्गों के विकास का गहरा प्रभाव रहा है। इन स्थानों ने गुन्नार मिर्डल के मत के अनुरूप संगुटिकरण (Conglomeration) की मित्तव्ययताओं के आधार पर बड़े स्तर पर औद्योगिकीकरण को अपनी ओर आकृष्ट किया है।

3) ऐतिहासिक दृष्टि से विकसित राज्यों में कौशल, संवेदनशीलता और निष्पादन प्रणालियों के आधार पर प्रशासनिक व्यवस्था अधिक रही है। पूँजी तो बहुत अधिक गतिशील होती है। एक स्थान से दूसरे स्थान जा सकती है। किंतु सुशासन का इस प्रकार स्थान परिवर्तन नहीं हो पाता। यह तो किसी स्थान/प्रदेश के अपने सामाजिक-राजनीतिक परिवेश में, दीर्घकाल में विकसित होता है। एक पुरानी पड़ गई सामाजिक रचना आधुनिक दृष्टि से सुशासन को धारण नहीं कर पाती। यह तो अपने दुर्बलताकारी एवं भ्रष्टाचारी प्रभावों के माध्यम से बाध्य रूप से सुशासन की स्थापना के प्रयासों को भी निराश और निष्फल बना देती है।

4) अन्य संबंधित ऐतिहासिक कारक संरचनात्मक सुविधाओं का विकास है। आज के अधिक विकसित क्षेत्र वही हैं जहां रजवाड़े शाही में ही संरचनात्मक विकास का सूत्रपात हो गया था। कितने ही अन्य राज्यों के राज परिवार अपने आप को ईश्वर का प्रतिनिधि और शासन के नैसर्गिक अधिकार से संपन्न मानते रहे। उन्होंने संरचनात्मक विकास पर कोई ध्यान नहीं दिया।

5) अभी हाल ही के वर्षों में भी (उन्हीं 'देवदूतों' के युग की भांति) सरकारी बजट से संरचना के वित्तीयन में काफी गिरावट आ रही है। विकसित प्रांतों और बड़े नगरों की ओर ही आंतरिक संस्थागत वित्त और बाध्य सहायता का प्रवाह हो रहा है।

6) सावधिक ऋण संस्थान और व्यावसायिक बैंक भी अपेक्षाकृत अधिक विकसित राज्यों में निवेश करने को अधिक उत्सुक दिखाई देते हैं।

बैकों द्वारा रियायती वरीयता साख और वित्तीय संस्थानों की पुनः वित्तीयन सुविधाओं से अमीर प्रांतों को कम ब्याज दर पर निवेश योग्य कोष आसानी से पाने में मदद मिली है।

इसी प्रकार शहरी आधारभूत सुविधाओं के प्रयोक्ताओं से उनकी पूरी लागत वसूलने और राज्य सरकारों पर वित्तीय अनुशासन लागू करने के रिज़र्व बैंक के प्रयासों ने भी विकसित राज्यों और बड़े नगरों में ही निवेश के संकुलन को बढ़ावा दिया है।

7) देश के विभिन्न राज्यों में शिक्षा और तकनीकी प्रशिक्षण की सुविधाओं के लिए प्रावधानों में बहुत ही विशाल क्षेत्रीय असंतुलन और विषमता स्पष्ट दिखाई पड़ रही है।

8) देश की लोकवित्त व्यवस्था की संचालन विधि का भी अंतर्राज्यीय विषमताओं के सृजन और उन्हें बनाए रखने में बड़ा योगदान रहा है।

– निम्न आय राज्यों में सार्वजनिक निवेश, संरचनात्मक संवृद्धि और प्रशासनिक सेवाओं का स्तर उच्च आय राज्यों से बहुत पिछड़ा हुआ है। अतः विषमताएँ और घनीभूत और स्थायी हो जाती हैं।

– बिक्रीकर व्यवस्था से अमीर राज्य अपने करों के भार का गरीब राज्यों के निवासियों को निर्यात कर देते हैं।

– केन्द्र द्वारा राज्यों को रियायती ऋणों ने प्रतिगामी अंतर्प्रशासनिक अंतरणों को बढ़ावा दिया है।

9) भारत ने बढ़ते हुए वैश्वीकरण के परिवेश में संवृद्धि का कौशल गहन पथ चुना है और कुशल श्रम की मजदूरी दरें अभी से नियोक्ता स्पर्धा के कारण उछाल पर है। इस दशा में आवश्यक है कि दुर्लभ कौशल की नियोक्ता फर्मों के उत्पादन का स्तर उस कौशल का भरपूर प्रयोग करने योग्य हो। किंतु उसके लिए तो तीव्र संवृद्धि और पर्याप्त संरचनात्मक सुविधाओं से परिपूर्ण औद्योगिक वातावरण की आवश्यकता होगी। इसके कारण भी विषमताएँ अधिक हो जाती हैं।

10) सुधारपूर्व सार्वजनिक क्षेत्र तो पिछड़े क्षेत्रों में निवेश प्रवाहित कर क्षेत्रीय समता बनाए रखने में निर्णायक योगदान कर रहा था। किंतु सुधार कार्यक्रम ने तो सार्वजनिक क्षेत्र का ध्यान केंद्र ही बदल डाला है। यह क्षेत्र अब विषमता निवारण के रूप में उतना सबल नहीं रहा है।

आर्थिक सुधारों ने निजी क्षेत्र और निर्यातोन्मुख उत्पादन को बढ़ावा दिया है। लागत कटौती द्वारा स्पर्धाशील बनने के उत्सुक ये उद्यम भी अपेक्षाकृत अधिक विकसित क्षेत्रों की ओर अग्रसर हो रहे हैं। अतः निवेश कार्य इन्हीं क्षेत्रों में और संकेंद्रित हो रहे हैं। परिणामतः विषमता और गहरी हो रही है।

संक्षेप में हम यही कह सकते हैं कि उच्चतर संरचनात्मक सुविधा निर्माण व्यय ने अमीर राज्यों को अमीर ही बनाया है। संरचना और प्रति व्यक्ति आय में धनात्मक सहसंबंध रहता है। यह बात विभिन्न राज्यों के अनुभव से ही स्पष्ट हो रही है।

बोध प्रश्न 2

1) उन राज्यों के नाम बताएं जहाँ कृषि क्षेत्र का GSDP में योगदान 1981 के बाद से कम हो रहा है।

.....

.....

.....

2) GSDP में कृषि के अंश में कम गिरावट के क्या प्रभाव होते हैं?

.....

.....

.....

3) बताइए कि क्या समय के व्यतीत होने पर औद्योगिक विकास की विषमताएँ कम हुई हैं?

.....

.....

.....

4) शैक्षिक विकास के सूचक बताइए।

.....

.....

.....

13.8 क्षेत्रीय विषमता निवारण के उपाय

क्षेत्रीय विषमता के निवारण के उपायों की ये विशेषता होती हैं :

1) **केंद्र से राज्यों को संसाधन अंतरण में पिछड़े राज्यों का पक्ष लिया जाए** : हमारे देश में साधन अंतरण दो प्रकार से होते हैं : (क) योजना आयोग द्वारा मुख्यतः योजना अंतरण के रूप में; और (ख) वित्त आयोग द्वारा गैर-योजना अंतरण के रूप में। योजना आयोग संबद्ध विभागों से परामर्श कर केंद्रीय एवं केंद्र प्रायोजित परियोजनाओं के स्थान का चयन करता है।

   एक नवीन अध्ययन ने स्पष्ट किया है कि गरीब प्रांतों को विकास कार्यों के लिए अमीरों की अपेक्षा कहीं अधिक अनुपात में धन सुलभ कराया जा रहा है।

2) **समूचे क्षेत्र में शीघ्र प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों को वरीयता** : कृषि, सामुदायिक विकास, सिंचाई, विद्युत आपूर्ति, परिवहन-संचार और सामाजिक सेवाओं के कार्य क्षेत्र बहुत व्यापक होते हैं। ये जनसामान्य को आधारिक सुविधाएँ और सेवाएँ प्रदान करते हैं। ये राज्यों की योजनाओं का अंश हैं और राज्य योजनाओं की रचना तथा उनमें समयानुसार परिवर्तनों के माध्यम से विकास के फल पूरे देश में वितरित हो सकते हैं।

3) **औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े क्षेत्रों में सेवाओं का प्रावधान** : अनेक राज्यों की योजनाओं में नदी घाटी योजनाएँ बहुत अहम होती हैं और इन बहुमुखी प्रकल्पों में बड़े स्तर पर निवेश होता है। ये एवं अन्य अनेक प्रकल्प देश के उन बड़े भू-भागों के विकास के लिए आवश्यक हैं जहाँ अभाव, बेरोज़गारी छाई है या जो अन्य किसी न किसी रूप में कम विकसित रह गए हैं। कृषि उत्पादन और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों, शिक्षा और स्वास्थ्य योजनाएँ आदि के लाभ दूर-दराज के क्षेत्रों तक पहुंच सकते हैं।

4) **लघु और ग्रामीण उद्योगों के प्रसार कार्यक्रम** : ये उद्यम देश भर में फैले हुए हैं और केंद्र एवं राज्य सरकारें विभिन्न क्षेत्रों में इन उद्यमों को कई प्रकार की सहायता प्रदान करती है। सभी राज्यों में जो ओद्यौगिक बस्तियाँ बनाई गई हैं, उनकी स्थापना प्रायः ग्रामीण/कृषिक क्षेत्रों में हुई है।

5) **औद्योगिक गतिविधियों का विसरण (प्रसार)** : सार्वजनिक उद्यमों के स्थान का चयन करने में आवश्यक तकनीकी और आर्थिक कसौटियों को नज़रअंदाज किए बिना जहां तक संभव हुआ अपेक्षाकृत पिछड़े क्षेत्रों के हितों का ध्यान रखा गया है। अनेक प्रकल्प तो विशेषज्ञों के अध्ययनों और आर्थिक कसौटियों के अनुसार स्थापित हुए हैं। किंतु उन्हें औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े क्षेत्रों में लगाया गया है और उन क्षेत्रों को भविष्य में बहुत लाभ पहुँचेगा।

मूलभूत पूंजी और उत्पादक पदार्थों के उद्यम कच्चे माल के स्रोतों के पास अन्य आर्थिक नियमों का अनुसरण करते हुए लगाए गए हैं। अब यह भी अनुभव किया जा रहा है कि बड़े स्तर पर उपभोक्ता पदार्थों का निर्माण करने वाले उद्योगों से भी क्षेत्रीय विकास के एक नए स्वरूप की प्राप्ति संभव हो सकती है।

किसी सीमा तक नई प्रक्रियाओं के विकास और कच्चे माल के नए प्रयोग सामने आने से भी औद्योगीकरण को प्रोत्साहन मिला है। ऐसे विकास को बढ़ावा देते समय क्षेत्रीय वितरण और उत्पादन की मितव्ययता के बीच एक सही संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता होगी।

6) **पिछड़े क्षेत्रों के लिए विकास योजनाएँ** : वर्तमान नीति के अनुसार पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए सामान्य क्षेत्रकीय कार्यक्रमों के अतिरिक्त और अधिक धन राशियां विशेष रूप से आबंटित होती हैं। इन विशेष योजनाओं के ये वर्ग हैं :

- **विशेष लक्षणों वाले क्षेत्रों के लिए** : मरू भूमि विकास कार्यक्रम, अनावृष्टि आशंका ग्रस्त क्षेत्र विकास कार्यक्रम, जलसंग्रह क्षेत्र विकास, पर्वतीय क्षेत्र विकास एवं उपयोजनाएँ, उत्तर-पूर्व विकास परिषद, जनजातीय क्षेत्र विकास एजेंसी आदि।
- **विशिष्ट समूह केंद्रित योजनाएँ** : छोटे किसानों, SC वर्गों के विकास के लिए विशेष एजेंसियां आदि।
- **प्रोत्साहन एवं रियायत योजनाएँ** : पिछड़े क्षेत्रों में विशेष योजनाओं के लिए वित्तीय संस्थाओं से रियायती ऋण, कर-राहत, निवेश साहाय्य, परिवहन साहाय्य, कच्चे माल के आबंटन में वरीयता, मशीनों की किश्तों पर खरीददारी, (246 औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े जिलों के लिए), अर्थक्षमता की नाम कसौटियां तथा ग्रामीण विद्युतीकरण निगम द्वारा इन क्षेत्रों को विद्युत आपूर्ति के निमित पूँजी व्यय के लिए ऋण की अदायगी में रियायतें आदि।
- **राष्ट्रीय ग्राम विकास योजना** : यह योजना 150 जनपदों में चल रही है। एक रु.25000 करोड़ का पिछड़े राज्य कोष स्थापित हुआ है जो वर्ष 2005-06 काम प्रारंभ कर चुका है।

13.8.1 मुख्य त्रुटियाँ/सीमाएँ

1) इन सभी योजनाओं की सबसे बड़ी त्रुटि तो यही है कि वास्तविक धरातल पर इनकी प्रगति की कोई जानकारी संप्रेषित नहीं होती। आम धारणा बन रही है कि ये योजनाएँ कागजी शोर होती हैं– इनके तकनीकी आर्थिक दांत भी नहीं होते और वास्तव में इन पर कोई काम नहीं होता। अधिकांश धन नौकरशाही और स्थानीय सत्ताधीशों की तिजोरियों में चला जाता है।

2) यद्यपि क्षेत्र विकास योजनाओं के लिए आबंटित धनराशियां बड़ी भारी भरकम दिखाई देती हैं किंतु यदि प्रति व्यक्ति धन सुलभता के अनुसार तुलना करें तो ये विकसित क्षेत्रों की तुलना में कम रह जाती हैं।

3) औद्योगिक और परिवहन साहाय्यों के प्रभावों का अभी मूल्यांकन नहीं किया गया है। किंतु जो थोड़ी बहुत जानकारी मिल रही है, उससे यही ज्ञात होता है कि साहाय्यों के सकारात्मक परिणाम नहीं मिल पाते हैं जहाँ संरचना सुविधाएँ सुलभ हों।

4) विभिन्न प्रांतों और केंद्र शासित प्रदेशों में पिछड़े क्षेत्रों की पहचान के लिए कोई समरूप एवं संगतिपूर्ण कसौटियां नहीं बनाई गईं न आय छूट के लिए, न केंद्रीय निवेश सहायता योजना के लिए और न ही लाइसेंस प्रणाली के लिए। अतः इन क्षेत्रों की पहचान की वर्तमान कसौटियां अखिल भारतीय दृष्टि से पिछड़े क्षेत्रों के विकास की सही संभावनाओं की संप्राप्ति में सक्षम नहीं हो पायी हैं।

13.9 संतुलित क्षेत्रीय विकास के लिए सुझाव

इस विषय पर एक नये अध्ययन ने संतुलित क्षेत्रीय विकास के लिए ये सुझाव दिए हैं:

1) कृषि में निवेश का बढ़ाना जरूरी है। पिछड़े क्षेत्रों में तो इसकी विशेष जरूरत है। गरीब क्षेत्रों में कृषि के अग्र- एवं पश्च-गामी संबंध सूत्रों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। वर्षा-जल संग्रह, मृदा संरक्षण, ग्रामीण सड़कों, गोदामों, प्रसंस्करण सुविधाओं और अधिक दाम दिलाने वाली फसलों पर विशेष बल देना चाहिए। विभिन्न क्षेत्रों में कृषिक संवृद्धि में भी काफी अंतर है। उनका शमन भी निश्चय ही क्षेत्रीय असंतुलन घटाने में सहायक होगा।

2) अब तो सेवा क्षेत्र संवृद्धि का नाम सारथी बन रहा है। अनेक राज्यों में बैंकिंग, बीमा और संरचना सुविधाओं का संवृद्धि विस्तार में बड़ा योगदान रहा है। पिछड़े क्षेत्रों में इन सभी गतिविधियों को प्रोत्साहित करने की बड़ी आवश्यकता है।

3) पिछड़े क्षेत्रों के निवासियों के जीवनस्तर के उन्नयन और वहां धारणीय विकास को संभव बनाने के लिए उन क्षेत्रों में विद्युत, परिवहन, दूरसंचार तथा सिंचाई की सुविधाओं का विकास करना तो एक पूर्वशर्त ही है। यहां निजी निवेश को आकर्षित करने में नियमित एवं सुनिश्चित विद्युत आपूर्ति, विकसित परिवहन तंत्र और आधुनिक दूरसंचार सुविधाओं को महत्त्वपूर्ण कारक माना जाता है।

4) वित्तीय संसाधनों का अंतरण : केंद्र द्वारा एकत्र कर आदि के अंतरण के वितरण सूत्र को और अधिक प्रगतिशील बनाया जाना चाहिए। वित्त आयोग और योजना आयोग द्वारा प्रयोग हो रहे सूत्र में ये मुख्य कारक हैं: (क) जनसंख्या, (ख) कर संग्रह, (ग) पिछड़ेपन की कोई कसौटी, और (घ) बड़े सिंचाई/विद्युत या किसी अन्य सेवा के उन्नयन के लिए वित्त की आवश्यकता। जनसंख्या को 70 से 90 प्रतिशत का भारमान दिया जाना तो समझ आता है किंतु कर संग्रह और बड़े प्रकल्प के लिए धन की आवश्यकता प्रतिगामी लगती है। धनी राज्यों का कर संग्रह और बड़े प्रकल्प की रचना क्षमता अधिक होती है (क्योंकि उनकी प्रति व्यक्ति आय अधिक है)। अतः वितरण सूत्रों में से इन्हें पूरी तौर पर निकालना

उचित लगता है। सारे केंद्रीय संसाधनों का विभाजन केवल जनसंख्या और पिछड़ेपन के आधार पर होना चाहिए।

5) एक और बात पर गौर होना चाहिए : केंद्र द्वारा अंतरण राशि तय करते समय किसी राज्य के अंदर अल्पविकसित क्षेत्रों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। दूसरे गरीबी को तो अंतरित साधनों का आकार नहीं बल्कि उनके प्रयोग का स्वरूप प्रभावित करता है। अतः अंतरण निर्धारण की इकाई प्रांत नहीं बल्कि जनपद होनी चाहिए। पिछड़े हुए जिलों को ही अधिक धन का आबंटन होना चाहिए। यहां भी धन रूपी निवेष की पतली-सी तह सभी ओर फैलाने की अपेक्षा औद्योगिक पिछड़ेपन के आधार पर निवेश वरीयताओं की पहचान कर गहन प्रयोग करना अधिक लाभप्रद होगा।

6) केंद्रीय बजट के संरोधों के कारण केंद्र द्वारा राज्यों में प्रत्यक्ष निवेश तो धीरे-धीरे बंद ही हो जाएगा। इन हालात में किसी राज्य की आर्थिक प्रगति को प्रभावित करने वाला सबसे बड़ा कारक वहां प्रशासन की गुणवत्ता हो जाती है। एक बेहतर प्रशासन अधिक राजस्व जुटाने और उसका बेहतर प्रयोग करने में सफल रहता है। यही राज्य देशीय और विदेशी स्रोतों से अधिक निवेश भी आकर्षित कर पाएंगे। यही राज्य अधिक अर्थक्षम प्रकल्पों के विचार/प्रारूप तैयार करने और केंद्रीय सहायता या बाह्य धन पाने के प्रयास में सफल हो सकते हैं। अतः पिछड़े राज्यों में तो विशेष रूप से प्रशासन को सुदृढ़ करने पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

7) आने वाले वर्षों में किसी राज्य में निवेश के निर्णय पर उसकी पर्यावरणीय नीतियों का बहुत प्रभाव रहने वाला है। वैश्विक नियम और अनुबंध पर्यावरण संबंधी नीतियों के तर्कसंगत समुच्चयों की मांग कर रहे हैं। विदोहनकारी उद्योगों, तेल और धात्विक खनिजों आदि के विषय में तो पर्यावरण विषयक अपेक्षाएं बहुत महत्त्वपूर्ण होती जा रही हैं। राज्यों को इस पक्ष पर अधिक ध्यान देना होगा।

अंततः संतुलित क्षेत्रीय विकास केवल किसी क्षेत्र में अधिक संसाधन झोंक देने से नहीं होगा। इसके लिए तो अधिक संसाधन आकर्षित करने के उपयुक्त वातावरण का निर्माण करना होगा जो निवेशकों को भी उचित प्राप्ति कराते हुए उन संसाधनों का सही प्रयोग भी सुनिश्चित कर सकें।

13.10 अभिसरण प्रमेय

इस प्रमेय के अनुसार किसी अर्थव्यवस्था की आर्थिक संवृद्धि में विस्तार आने पर बेहतर संसाधन संपन्न क्षेत्र अन्य क्षेत्रों से अधिक तेज गति से प्रगति करते हैं। किंतु कुछ समय बाद वहाँ ह्रासमान प्रतिफल का नियम लागू हो जाता है। अपेक्षाकृत पिछड़े क्षेत्रों में पूँजी की सीमांत उत्पादिता दर अधिक उच्च होगी और यही सवंद्धि देशों को एकसमान करने लगेगी। इसी प्रक्रिया में विभिन्न क्षेत्रों के बीच आय के अंतर की खाई भी पटने लगेगी।

किंतु भारत में अभी तक ऐसे अभिसरण प्रभाव के कोई संकेत नहीं मिल रहे हैं।

बोध प्रश्न 3

1) कोलिन क्लार्क की संकल्पना के आधार पर क्षेत्रीय विषमताओं के कारण बताइए।

.....

.....

.....

2) क्षेत्रीय विषमताएँ कम करने में सावधिक ऋण देने वाले संस्थानों की भूमिका बताइए।

.....

.....

.....

3) भारत सरकार ने क्षेत्रीय विषमताओं के निवारण के लिए क्या-क्या कदम उठाए है?

.....

.....

.....

13.11 सारांश

भारत में क्षेत्रीय विषमता योजना और नीति निर्माताओं के लिए एक बड़ी चुनौती बनी हुई है। वर्षों से अनेक कार्यक्रम लागू होने के बाद भी यह समस्या बनी हुई है। ये विषमताएँ संवृद्धि दर, प्रति व्यक्ति SDP, प्रति व्यक्ति उपभोग व्यय, GSDP में क्षेत्रानुसार योगदान, कृषिक विकास, औद्योगिक और संरचना सुविधाओं के विकास एवं मानवीय विकास में भी प्रतिबिंबित होती हैं। क्षेत्रीय विषमताओं के ये महत्त्वपूर्ण कारक हैं : संरचनात्मक विकास में ऐतिहासिक अंतर, संरचना के लिए बजटीय समर्थन में गिरावट, वित्तीय संस्थानों, शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधाओं के प्रावधान आदि। इन विषमताओं के निवारण के लिए अनेक कार्यक्रम लागू किए गए हैं। किंतु इन सभी कार्यक्रमों को अनेक त्रुटियां झेलनी पड़ी हैं और अभी भी संतुलित क्षेत्रीय विकास सुनिश्चित करने के लिए बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

13.12 अभ्यास प्रश्न

1) क्षेत्रीय विषमताओं के संदर्भ में त्वरक-गुणक प्रतिक्रियाओं का क्या अर्थ होगा? किसी देश में क्षेत्रीय विषमताओं की आप किस प्रकार समीक्षा करेंगे?

2) क्षेत्रीय विषमता का क्या अभिप्राय है? भारत में क्षेत्रीय विषमताओं का आकलन करें।

3) भारत में क्षेत्रीय विषमताओं की व्याख्या में संरचनात्मक सुविधाओं के विकास की भूमिका का मूल्यांकन करें।

4) भारत सरकार द्वारा क्षेत्रीय विषमताएँ मिटाने के लिए किए गए उपायों की समीक्षा करें। आप इन असंतुलनों के निवारण के लिए क्या सुझाव देंगे?

13.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Vorauer, K. Europäische Regionalpolitik Regionale Disparitäten. Theoretische Fundierung, empirische Befunde und politische Entwürfe. Passau: Münchener Geographische Hefte, 1997. ISBN 3-932820-01.

Alois Kutscherauer, Hana Fachinelli, Miroslav Huèka, Karel Skokan, Jan Sucháèek, Petr Tománek, Pavel Tuleja, (2010) 'Regional disparities in regional development of the Czech Republic', 2010WD-55-07-1, VŠB-Technical University of Ostrava, Faculty of Economics.

Mera, K (1975): Income Distribution and Regional Development, University of Tokyo Press, Tokyo.

Myrdal, Gunner (1957): Economic Theory and Underdeveloped Regions, Gerald Duckworth and Co Ltd, London.

Hirschman, A.(1958): The Strategy of Economic Development, Yale University Press, New Haven.

Kuznets, S (1963): Quantitative Aspects of the Economic Growth of Nations, VIII. Distribution of Income by Size, in Economic Development and Cultural Change Vol XI, No 2, Part 11, pp 1-45.

Bhattacharya BB, Sakthivel S. (2004): Regional Growth and Disparity in India: Comparison of Pre- and Post-Reform Decades. Economic and Political Weekly, 39(10): 1071-77.

Kar S, Sakthivel S. (2007): Reforms and Regional Inequality in India. Economic and Political Weekly, 42(47): 69-77.

Puga D. (1999): The Rise and Fall of Regional Inequalities. Eur. Econ. Rev., 43: 303-34.

Kim S. (2008): Spatial Inequality and Economic Development: Theories, Facts, and Policies. Commission on Growth and Development Working, Washington DC. 16.

Papola, T.S, Nitu Maurya, Narendra Jena(November 2011): Inter Regional Disparities in Industrial Growth and Structure, Institute for Studies in Industrial Development, New Delhi

Anjani Kumar, Sant Kumar, Dhiraj K. Singh and Shivjee (2011): 'Rural Employment Diversification in India: Trends, Determinants and Implications on Poverty' *Agricultural Economics Research Revie,* Vol. 24 (Conference Number) 2011 pp 361-372

Postel, Sandra. (1999): Pillar of Sand: Can the Irrigation Miracle Last?, New York & London: WW Norton & Company.

13.14 शब्दावली

क्षेत्रीय विषमता : किसी स्वरूप, प्रक्रिया या घटनाक्रम के आधार पर विशेष भौगोलिक क्षेत्रवार विभाजन। ये अंतर

उस वृहतर संरचना की कम से कम दो इकाइयों के बीच अवश्य होना चाहिए।

पश्च प्रवाह और प्रसार प्रभाव: किसी चहेते क्षेत्र में आर्थिक और सामाजिक शक्तियों का संकुलन असंतुलन पैदा करता है। मिर्डल का मत है कि जिस अर्थव्यवस्था को संवृद्धि लाभ प्राप्त हो जाता है, वह उसे बनाए रखता है। श्रम, पूँजी और व्यापार के कमजोर क्षेत्रों की ओर प्रवाह को ही पश्च प्रवाह कहा गया है। व्यापार से मेजबान क्षेत्र लाभान्वित होता है। प्रसार प्रभाव या सकारात्मक बाह्यताएँ अन्य क्षेत्रों में भी संवृद्धि की नई तरंगों को संचरित करने में सहायक हैं। ये पिछड़े क्षेत्रों के उत्पादन की मांग में वृद्धि, वहां भी प्रौद्योगिकी और ज्ञान के प्रसार आदि का रूप ले सकती हैं। किंतु प्रसार प्रभाव पश्च प्रवाह प्रभाव से क्षीण होते हैं– अंतर्क्षेत्रीय अंतर फिर भी विस्तृत बने रहते हैं।

विचरण गुणांक : किसी जनसंख्या के अंतर्निहित अंतरों को मापने की एक विधि। यह मानक विचलन और औसत का अनुपात है जिसे प्रतिशत के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है। उच्च विचरण गुणांक का अर्थ किसी समूह में अधिक आंतरिक विभिन्नता होता है।

जी डी पी और एन डी पी : जी डी पी एक निश्चित अवधि में देश में उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं के अंतिम उत्पादन का बाजार मूल्य है। निवल घरेलू उत्पाद (NDP) वस्तुतः जी डी पी में से देश के पूँजी भंडार का मूल्य ह्रास को घटाकर प्राप्त होता है।

साख-जमा अनुपात : बैंक व्यवसाय में प्रयुक्त सूचक। यह उत्पादक क्षेत्रों को प्रोत्साहित करने और आर्थिक संवृद्धि में बैंकिंग क्षेत्र का योगदान माना जाता है। बैंक आधारित वित्तीय व्यवस्था में यह अनुपात साख प्रदाय व्यवस्था की प्रभावोत्पादकता का एक महत्त्वपूर्ण मापक माना जाता है। इस अनुपात का उच्च स्तर बैंकों की साख प्रदान करने की उच्च तत्परता का सूचक है।

मानव विकास सूचक (HDI) : मानवीय विकास के आधार पर देशों को क्रमिकता सूत्र में बांधने की एक विधि। 'मानव विकास' शब्द का प्रयोग अब पूर्ववर्ती जीवन स्तर के स्थान पर होने लगा है। यह जीवाशा, साक्षरता, शिक्षा और जीवन स्तर का एक सांझा मापक है।

13.15 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

बोध प्रश्न 1

i) भाग 13.2 देखें

ii) भाग 13.2 देखें

iii) भाग 13.1 देखें

iv) भाग 13.1 तथा 10.2

बोध प्रश्न 2

i) भाग 13.4 देखें

ii) भाग 13.4 देखें

iii) भाग 13.5 देखें

iv) उपभाग 13.6.1 देखें।

बोध प्रश्न 3

i) भाग 13.7 देखें

ii) भाग 13.7 देखें

iii) भाग 13.8 देखें।